9

आम के बाद गुठली आती है!

उषा शर्मा*

बच्चों के लेखन में उनकी अपनी ही दुनिया झलकती है। वे अकसर वही लिखते हैं जिसे उन्होंने हृदयस्थ किया हुआ है। बच्चों की अनुभूति का स्तर भी किसी वयस्क की तरह ही परिपक्व होता है, हाँ यह अलग बात है कि वे क्या अनुभूत करते हैं और कितनी गहराई तक अनुभूत करते हैं। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि बड़े जिस चीज़ या घटना को बहुत मामूली मानते हैं, वही चीज़ या घटना किसी बच्चे के लिए 'बहुत बड़ी' होती है। शायद ही किसी बड़े को उतना अंतर पड़े जब उनकी मुर्गी किसी की उदर-पूर्ति का माध्यम बने। लेकिन वहीं एक बच्चे के लिए यह बहुत बड़ी घटना होती है और वह उस मुर्गी के दर्द को महसूस कर पाता है। प्रस्तुत लेख में विभिन्न उदाहरणों के माध्यम से यही 'कहने' का प्रयास किया गया है कि बच्चों के लेखन को बहुत ध्यान से पढ़ा जाना चाहिए ताकि एक ओर उनके लेखन की बारीकियों को समझा जा सके और साथ ही उनके मनोभावों को भी समुचित रूप से समझा जा सके। एक-दो बच्चों की दुनिया के बहाने अनेक बच्चों की दुनिया को समझने का प्रयास किया गया है।

© NCERT not to be republished

बच्चों की दुनिया में 'उठापटक'

बच्चों की शिक्षा को लेकर अनेक तरह के विचार हमारे शिक्षा जगत में व्याप्त हैं। उन सभी में शिक्षा के उद्देश्यों को लेकर उतनी भिन्नता नहीं है जितनी भिन्नता शिक्षाशास्त्र यानी पढ़ने-पढ़ाने के संदर्भ में नज़र आती है। शिक्षा संबंधी विचारों में भिन्नता का एक और संदर्भ है— बच्चों की दुनिया! बच्चों की दुनिया में उनका परिवार, उनका पास-पड़ोस, उनका समाज और स्कूल (अगर वे स्कूल जाते हैं तो) शामिल है। तीन-चार साल के बच्चे की दुनिया भी उतनी ही बड़ी होती है जितनी किसी एक वयस्क की! हम अकसर बड़ों की दुनिया की 'उठापटक' की बात तो बेहद संजीदगी के साथ करते हैं लेकिन हम बच्चों की दुनिया में इस 'उठापटक' की कल्पना संभवतः ही कर पाते हों। इसका मुख्य कारण यह है कि हमें लगता है कि 'बच्चा ही तो है, इसकी ज़िंदगी में क्या 'घटेगा''? इसे किस बात की चिंता या फिर यह विचार हावी हो जाता है कि बच्चे संवेदनशील नहीं होते, क्योंकि वे अबोध हैं, वे क्या जानें? उन्हें किस बात की चिंता? उन्हें किन चीज़ों का इंतज़ाम करना है? बस, हम यहीं चूक जाते हैं। दरअसल, बच्चे भी उतने ही संवेदनशील होते हैं जितने बड़े! अंततः दोनों ही एक वर्ग विशेष या एक विशेष समाज-सांस्कृतिक परिवेश में रहते हैं। बच्चों की शिक्षा के संदर्भ में उनकी

---

* *प्रोफ़ेसर,* प्रारंभिक शिक्षा विभाग, रा.शै.अ.प्र.प., नयी दिल्ली

समाज-सांस्कृतिक पृष्ठभूमि को जानना-समझना अत्यंत आवश्यक है। शिक्षा और समाज के आपसी रिश्ते के दो पहलू हैं! एक, समाज शिक्षा को प्रभावित करता है और दूसरा शिक्षा समाज को प्रभावित करती है! दोनों ही पहलुओं में जो सबसे खास बात है, वह है— प्रभावित करना। इस 'प्रभाव' को समझने के लिए किसी भी शिक्षक, नीति-निर्माता के पास वह अंतर्दृष्टि चाहिए जो इस रिश्ते को और भी अधिक मज़बूती दे सके। कुल मिलकर स्थिति यह कहती है कि समाज ने शिक्षा को और शिक्षा ने समाज को अपनी जड़ों से जकड़ा हुआ है। यह 'जकड़न' जितनी समृद्ध होगी बच्चों की शिक्षा भी उतनी समृद्ध होगी। समाज में फैली विषमताएँ शिक्षा को भी 'दूषित' करती हैं जिसका सीधा प्रभाव बच्चे पर पड़ता है जिसके लिए हम पूरी शिक्षा व्यवस्था को पुनर्गठित करते हैं। जब हम समाज की बात करते हैं तो उसमें समाज की राजनीति भी शामिल है। इस अर्थ में राजनीति भी बच्चों की दुनिया में 'उठापटक' मचाती है। इस संदर्भ में, प्रोफ़ेसर कृष्ण कुमार ने अपनी पुस्तक *राज समाज और शिक्षा* (पृष्ठ 13) में कहते हैं, "भारत में बहुत कम लोग यह मानते हैं कि उनके बच्चों का जीवन राजनीति द्वारा नियंत्रित होता है। बच्चों के बारे में सोचते समय ज़्यादातर माता-पिता परिवार की परिधि के बाहर नहीं जाते। परिवार को वे एक राज्यनिरपेक्ष इकाई के रूप में देखते हैं और सत्ता को परिवारनिरपेक्ष इकाई के रूप में। इस दृष्टिकोण ने परिवार को सत्ता के लिए अत्यंत उपयोगी सिद्ध किया है। परिवार एक ओर व्यक्ति की चुनौतियाँ जज़्ब कर लेता है, दूसरी ओर शासन को एक सुविधाजनक दायरे में कार्यरत रहने की छूट देता है। लोग सोचते हैं कि बच्चों और बूढ़ों की देखभाल जैसे काम परिवार के ज़िम्मे है और सरकार की ज़िम्मेदारी विदेश नीति, आयात-निर्यात, मुद्रा नियंत्रण जैसे 'बड़े' कामों की देखरेख करना है। इस तरह के श्रम-विभाजन का भ्रम लोगों को इस समझ से वंचित रखता है कि उनके बच्चे राजनीतिक नियंत्रण से उतने ही प्रभावित होते हैं जितने वे स्वयं।" बच्चों की खुद की दुनिया में कभी प्रतियोगिता की होड़ मचती है तो कभी वे सामाजिक मर्यादाओं के बंधन से बँध जाते हैं। कभी अंग्रेज़ी भाषा की मानसिकता से संघर्ष चलता है तो कभी अव्वल आने की हड़कंप मची रहती है। बच्चे जो सोचते हैं, जो करते हैं और जो लिखते हैं— उन सबमें उनका परिवेश निरंतर प्रभावी कारक के रूप में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। बच्चों को समझना हो और बच्चों की दुनिया को समझना हो तो बच्चों की बातों, बच्चों के लेखन और बच्चों के चेहरे की बदलती रंगतों को गौर से देखा होगा। यह लेख बच्चों की इन्हीं 'दुनियाओं' को समर्पित है जो किसी भी शिक्षक, अभिभावक और नीति-निर्माता को वह दिशा देगा जिसके सहारे बच्चों की दुनिया में अपेक्षित परिवर्तन लाया जा सके।

आम के बाद गुठली आती है!

शिक्षा अनवरत चलने वाली एक प्रक्रिया है जिसे स्कूल की चाहरदीवारी से बाँधा नहीं जा सकता। बच्चे और बड़े भी, अनौपचारिक से बहुत कुछ सीखते हैं जो शिक्षा के दायरे में आता है। इस दृष्टि से हर व्यक्ति अपने आप में एक अज्ञात शिक्षक है। हम जिस परिवेश में रहते हैं , उस परिवेश की हर स्थिति, घटना, व्यक्ति

© NCERT not to be republished

हमें बहुत कुछ सीखने के अवसर देते हैं। अब यह हमारे ऊपर निर्भर करता है कि हम क्या सीखते हैं और कितना सीख पाते हैं। तो बात अनौपचारिक शिक्षा के केंद्र 'ऋषिकुलशाला' केंद्र नंबर 1, गाज़ियाबाद की है। 'ऋषिकुलशाला' पावन चिंतन धारा चैरिटेबल ट्रस्ट की एक मुहिम है जहाँ हाशिए पर अवस्थित समाज के बच्चे अनौपचारिक शिक्षा प्राप्त करते हैं। इसका एक उद्देश्य बच्चों को अपराध की दुनिया से दूर रखना भी है। यह 'ऋषिकुलशाला' देश भर के अलग-अलग शहरों में चलती हैं और लगभग 800 बच्चे इस शाला में पढ़ते हैं। 'ऋषिकुलशाला' केंद्र नंबर 1, गाज़ियाबाद में लगभग 35 बच्चे पढ़ते हैं और शुची सहित लगभग 8 शिक्षक इस शाला के बच्चों को पढ़ाते हैं। गर्मी का मौसम और बातचीत चल रही थी फलों पर! शुची ने बारी-बारी से सब बच्चों से फलों के बारे में जानकारी हासिल की कि बच्चे किन-किन फलों से परिचित हैं। फिर बात मौसमी फलों पर आकर टिक गई और शुची ने पूछा, ''आम के बाद क्या आता है?'' कक्षा में पवन के स्वर में जो शब्द गूँजा वह था— ''गुठली!'' शुची के लिए यह अप्रत्याशित जवाब था। दरअसल शुची यह अपेक्षा कर रही थीं कि बच्चे आम के बाद जामुन का नाम लेंगे, क्योंकि गर्मी के बाद बरसात का मौसम आता है और बरसात में जामुन मुख्य फल होता है जो बहुतायत में नज़र आता है। पवन के इस जवाब ने बच्चों के उस समाज, सांस्कृतिक, पारिवारिक और आर्थिक पृष्ठभूमि को उजागर कर दिया जिसके बारे में जानना, समझना इस शिक्षक के लिए अत्यंत आवश्यक है। पवन के इस जवाब ने शुची को यह समझने में मदद की कि बच्चों को फल आसानी से प्राप्य नहीं हैं। वे 'फलों की दुनिया' का हिस्सा नहीं हैं या फिर 'फल' बच्चों की दुनिया का हिस्सा नहीं हैं। बात किसी भी तरह से कही जाए— असल मुद्दा यही है कि बच्चे जिस तबके से आते हैं वहाँ अभाव है और बच्चे आम जैसे फलों का स्वाद लेने के लिए प्रतीक्षारत रहते होंगे। इस बात की संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता कि बच्चे बहुत चाव से आम खाते होंगे और आम बहुत जल्दी समाप्त हो जाता होगा। जो शेष रह जाता है वह 'गुठली' है! उनके लिए 'आम के बाद बहुत जल्दी गुठली आ जाती होगी और वे आम का भरपूर स्वाद भी नहीं ले पाते होंगे!' 'आम के बाद गुठली आती है' का यह 'सबक' है कि हम जिन बच्चों की शिक्षा के लिए चिंतित रहते हैं उन बच्चों के जीवन की चिंता भी हमें करनी होगी। उन बच्चों को जीवन की बुनियादी सुविधाएँ भी मुहैया करानी होंगी। जीवन है तो शिक्षा का उपयोग हो पाएगा इसलिए जीवन को 'बचाने' की सफल कोशिश करनी होगी। जीवन से संघर्ष और शिक्षा के लिए संघर्ष— दोनों साथ-साथ चलते हैं और ठीक भी है, हम किसी एक के समाप्त होने तक प्रतीक्षा तो नहीं कर सकते। जैसे संभव हो, जितना शीघ्र संभव हो— चीज़ों को सुधारने की कोशिश में जुट जाना चाहिए। आर्थिक अभाव बच्चों के बचपन और उनके व्यक्तित्व को 'कुचलने' की सामर्थ्य रखता है। इतना ही नहीं बच्चे की सोच भी प्रभावित होती है और उनकी कल्पनाओं में अमीर-गरीब का फ़र्क भी पनपने लगता है। इस तरह बच्चे जब कक्षा में अपने अनुभव साझा करते हैं या अपने मन की बात कहते हैं या फिर अपने जवाब देते हैं तो कहीं-न-कहीं उनका पूरा समाज-आर्थिक परिदृश्य स्पष्ट हो जाता है। आवश्यकता केवल इस बात की

© NCERT not to be republished

है कि बच्चों के जवाबों, मन की बातों और अनुभवों को बहुत ध्यान से सुना-पढ़ा जाए! इन 'थोड़े' से बच्चों के बारे में 'बहुत' कुछ पता चलता है और वे कक्षायी प्रक्रियाओं को निर्धारित करने में, दिशा देने में मदद करते हैं।

अमीर लड़का घमंडी

यह लेखन भोपाल स्थित उड़िया अनौपचारिक शिक्षा समाज समिति में पढ़ने वाले गगन का है जो तीसरी कक्षा में पढ़ता है। इस बस्ती में रहने वाले लोग मज़दूरी करते हैं, ठेले पर सब्ज़ी बेचते हैं और कुछ लोग 'कुछ भी नहीं करते'! बुनियादी सुविधाओं से वंचित वर्ग के बच्चे इस अनौपचारिक केंद्र में पढ़ते हैं। इसी केंद्र में गगन भी पढ़ता है जिसके माता-पिता नहीं हैं और वह अपने नाना-नानी के पास रहता है। गगन ने यह कहानी कही और उसके दोस्त ने यह कहानी लिखी!

(एक था अमीर लड़का और एक गरीब लड़का। अमीर लड़के के पास बहुत सारे खिलौने थे। और उसके पास

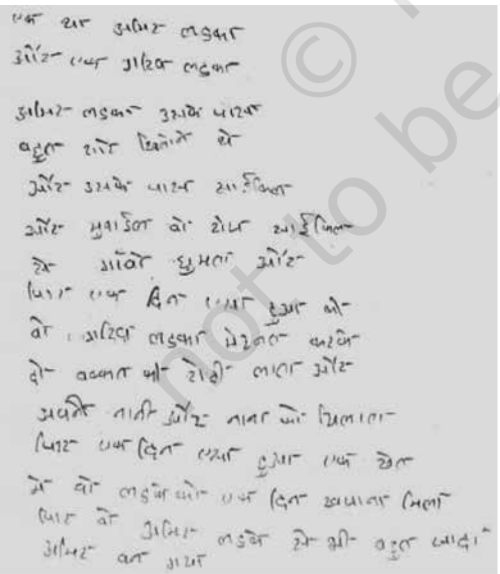

साइकिल और मोबाइल था। वो रोज़ साइकिल से गाँव में घूमता। फिर एक दिन ऐसा हुआ कि वह गरीब लड़का मेहनत करके दो वक्त की रोटी लाता और अपनी नानी-नाना को खिलाता। फिर एक दिन ऐसा हुआ कि एक खेत में उस लड़के को एक खज़ाना मिल गया। फिर वह अमीर लड़के से भी बहुत ज़्यादा अमीर बन गया।)

गगन की इस कहानी में दो-तीन बहुत खास बातें हैं—

- अमीर लड़का और गरीब लड़का
- अमीर लड़के के पास सुविधाएँ
- मेहनत करना
- नाना-नानी को खिलाना
- खज़ाना मिलना
- अमीर लड़के से भी ज़्यादा अमीर बन जाना

गगन की कहानी सतही तौर पर देखने पर बहुत 'सामान्य-सी' कहानी लगती है जिसमें किसी भी तरह का कोई *क्लाइमेक्स* नहीं है और न ही पात्रों के बीच परस्पर अंतःक्रिया! अमीर-गरीब का संघर्ष भी नहीं है। दोनों लड़के एक-दूसरे के 'रास्ते में नहीं आते'। कहानी बहुत जल्दी ख़त्म भी हो जाती है। लेकिन गगन की समाज-आर्थिक पृष्ठभूमि की झलक उसके चिंतन, उसकी सृजनात्मक अभिव्यक्ति में झलकती है। सबसे पहले तो गगन के मन-मस्तिष्क में अमीर-गरीब का फ़र्क है। वह खुद गरीबी का जीवन जी रहा है और बहुत मुश्किल से 'दो वक्त की रोटी' का जुगाड़ हो पाता होगा। 'दो वक्त की रोटी' का ज़िक्र स्वयं गगन ने अपनी कहानी में इसी भाषा में किया है— "वह गरीब लड़का मेहनत करके दो वक्त की रोटी लाता...।" भोजन जुटाने की बात को कई

© NCERT not to be republished

तरह से कहा जा सकता है, जैसे—

- खाना लाता
- भोजन लाता
- रोटी लाता
- रोटी का प्रबंध करता

रोटी के साथ 'दो वक्त' लगते ही अर्थ-व्यंजना बदल जाती है! फिर वह अभाव को बहुत स्पष्ट रूप से कह देती है। 'दो वक्त की रोटी' एक सामान्य व्यंजना नहीं है, इसमें जीवन की 'अपाधापी' और 'अभाव' दोनों झलकते हैं! इसके बाद 'और अपनी नानी-नाना को खिलाता।" भी यह संकेत तो देता ही है कि वह अपने नाना-नानी के पास रहता है या उनसे बहुत ज़्यादा लगाव है। अक्सर बच्चे अपनी रचनाओं में मम्मी-पापा का ज़िक्र करते हैं या फिर दादा-दादी का। लेकिन गगन ने नाना-नानी का ज़िक्र किया है। इसका अर्थ यह है कि गगन और उसके नाना-नानी के बीच आत्मीय रिश्ता है और 'खिलाता' से यह संकेत भर मिलता है कि उनके पास भी 'अभाव' के अतिरिक्त कुछ नहीं है। एक और खास बात! गगन को बचपन से ही यह 'संस्कार' मिल जाता है कि आर्थिक रूप से विपन्न व्यक्ति को मेहनत करनी होगी। इसलिए वह मेहनत करने को अपनी नियति मान लेता है और किसी तरह का 'शोक' नहीं करता। अपने अभावों को नियति के रूप में स्वीकार करना संघर्ष की स्थिति को ही समाप्त कर देता है! 'अब गरीब हैं तो हैं, क्या कर सकते हैं?'

बच्चे अकसर कहानी पढ़ते या सुनते हुए यह जान जाते हैं कि कहानी का एक अंत होता है। गगन ने भी कहानी का अंत खज़ाना मिलने से किया और गरीब को अमीर से भी ज़्यादा अमीर बनाने से किया—"एक खेत में उस लड़के को एक खज़ाना मिल गया। फिर वह अमीर लड़के से भी बहुत ज़्यादा अमीर बन गया।" यहाँ जो तुलना का पुट है वह गगन की मानसिक शांति का भी संकेत देता है। अमीर से भी बहुत ज़्यादा अमीर बन जाना— मानो अपनी विजय सिद्ध की और अमीर लड़के को अपने से कमतर बना दिया! कहानी के इस अंत ने गगन ने 'राहत' पहुँचाई होगी और कहीं-न-कहीं मन के किसी कोने में यह भाव भी रहा होगा कि वह कितनी भी मेहनत कर ले, अमीर लड़के से बहुत ज़्यादा अमीर नहीं बन सकता। यह केवल खज़ाना मिलने से ही संभव है। मेहनत करके रोटी लाना तो संभव है लेकिन मेहनत करके बहुत अमीर बन जाना संभव नहीं है। यह सोच गगन की कहानी में झलकती है। गगन की कहानी का 'प्लॉट' उसकी समाज-आर्थिक परिस्थितियों से प्रभावित है! गगन ने जो लिखा, वह उसका 'भोगा' हुआ भी हो सकता है और एक चाहत भी—'बहुत ज़्यादा अमीर बनने की'!

मैं ऐरोप्लेन में बैठना चाहता हूँ

दिसंबर, 2019 का महीना और गवर्मेंट हाई स्कूल, मुठि, जम्मू का एक कक्ष जहाँ प्राथमिक स्तर के बच्चे राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् द्वारा प्रकाशित बाल पत्रिका *फिरकी बच्चों की* के लिए कहानी, कविता, अनुभव आदि लिख रहे थे, वह भी अपने-अपने ढंग से! यहाँ 'अपने ढंग' का अर्थ है कि बच्चे अपनी-अपनी भाषा-क्षमता और गति के अनुसार अपना सृजनात्मक लेखन का कार्य कर रहे

© NCERT not to be republished

थे। कक्षा एक के बच्चे, चित्रों के माध्यम से स्वयं की अभिव्यक्ति कर रहे थे तो कक्षा 3 से 5 तक के बच्चे शब्दों, वाक्यों के माध्यम से स्वयं को अभिव्यक्त कर रहे थे। इसी कक्ष में कक्षा 4 के अरुण कुमार ने अपनी इच्छा कुछ इस तरह लिखी —

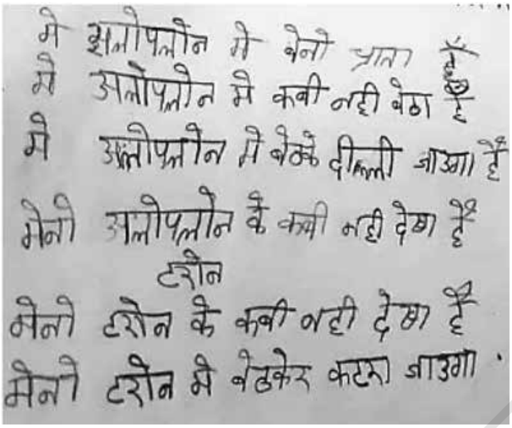

(ऐरोप्लेन में बैठना चाहता हूँ। मैं ऐरोप्लेन में कभी नहीं बैठा। मैं ऐरोप्लेन में बैठकर दिल्ली जाऊँगा। मैंने ऐरोप्लेन कभी नहीं देखा है। मैंने ट्रेन को कभी नहीं देखा है। मैं ट्रेन में बैठकर कटरा जाऊँगा।)

अरुण कुमार के लेखन के बहाने उसकी जिस दुनिया से परिचित होने का अवसर मिलता है, वह नायाब है! सबसे पहले अरुण की इच्छा की बात करते हैं। अरुण 'ऐरोप्लेन' और 'ट्रेन' में बैठना चाहता है। उसने न तो कभी 'ऐरोप्लेन' देखा है और न ही 'ट्रेन'! जब अरुण ने ये दोनों चीज़ें देखी ही नहीं तो इनमें बैठना भी नहीं हुआ होगा और अरुण ने इन दोनों चीज़ों के बारे में दोनों बातें बताई भी हैं! अरुण द्वारा अपने मन की बात लिखना यह बताता है कि अरुण देश, समाज की मुख्यधारा से कटा हुआ बच्चा है और ऐसी जगह रहता है जहाँ आने-जाने के स्थानीय साधन ही उपयोग में आते होंगे। रॉकेट के युग में बच्चे रेलगाड़ी से भी परिचित नहीं हैं! अरुण कुमार जैसे हज़ारों-करोड़ों बच्चे होंगे जिनके इलाके में रेलगाड़ी नहीं आती होगी या उन्हें उसे कभी देखने का अवसर नहीं मिला होगा। फिर यह सवाल उठता है कि अरुण ने अपनी बात में 'ऐरोप्लेन' और 'ट्रेन' का उल्लेख कैसे किया! इसका संभावित जवाब यह हो सकता है कि शायद बच्चे ने अपनी पाठ्यपुस्तक में इनके चित्र देखे हों, इनके बारे में पढ़ा हो या शिक्षक ने बताया हो! लेकिन बच्चे ने प्रत्यक्ष रूप से इन्हें कभी नहीं देखा! अरुण जिस वर्ग से संबंध रखता है उस वर्ग के बच्चों के साथ यातायात के साधनों के बारे में विस्तृत चर्चा की जा सकती है। जिस चीज़ को बच्चे ने देखा न हो और वह उसे लेकर बहुत उत्साहित हो तो शिक्षकों का दायित्व बनता है कि वे बच्चों को मल्टीमीडिया के द्वारा इनसे परिचित करा दें जिससे वे उन्हें 'भीतर तक' देख सकें।

अरुण के लेखन में भाषा की दृष्टि से अनेक बातें हैं जिन्हें किसी भी शिक्षक की नज़र से ओझल नहीं होना चाहिए। अरुण ने शब्दों को कुछ इस तरह लिखा है—

जो कहना है	**जो कहना है**	**जो कहना है**	**जो कहना है**
ऐरोप्लेन	अलोपलोन	ट्रेन	टरोन
मैं	मे	मैंने	मेनो
नहीं	नही	कभी	कबी
को	के	बैठ	बेठ

© NCERT not to be republished

अरुण ने शब्दों के लिए जिस वर्तनी का प्रयोग किया है वह लगातार किया है। 'ऐरोप्लेन/अलोपलोन' 'ट्रेन/टरोन' 'कभी/कबी' आदि शब्द यह बताते हैं कि अरुण ने जो शब्द जैसे लिखे हैं वे भले ही ठीक तरह से न लिखे हों लेकिन उनमें एक ही पैटर्न नज़र आता है। इसका अर्थ यह हुआ कि त्रुटियों में भी एक पैटर्न होता है। शिक्षक के लिए उस पैटर्न को पहचानना ज़रूरी है ताकि वे बच्चे को उसकी ज़रूरत के अनुसार सहायता उपलब्ध करा सकें। साथ ही बच्चे जिस तरह से बोलते हैं उसी तरह लिखते हैं, जैसे—'बेठके' (बैठकर)/ 'कबी'(कभी) शब्द। संभव है कि बच्चे 'ट्रेन' को 'टरोन' बोलते हों। अरुण क्या जानता है? अगर अरुण के भाषा प्रयोग के बारे में लिखना हो तो कहा जा सकता है कि अरुण निम्नलिखित बातें जानता है—

- अक्षरों को पहचानना
- अक्षरों को सही तरह से लिखना
- मात्राओं की जानकारी
- कुछ मात्राओं का सही प्रयोग
- हिंदी की वाक्य-संरचना
- जेंडर का ज्ञान और प्रयोग
- वचन का ज्ञान और प्रयोग
- किसी बात पर बल देने के लिए शब्द-चयन ('कभी नहीं')
- शब्दों को लिखते समय उनके बीच लगभग समान दूरी है।

अब अरुण को कहाँ मदद की ज़रूरत है? संभवतः मात्राओं, अनुस्वार (बिंदु), अनुनासिक (चंद्र बिंदु) के सही प्रयोग में। अकसर बच्चों के घर में जो घटता है या वे जो अनुभूत करते हैं, उसकी बेबाक अभिव्यक्ति उनकी कॉपी के पन्नों में सहजता से देखी जा सकती है। एक-एक करके सभी उदाहरणों का विश्लेषण करते हैं।

मेरी बहन

बच्चों के बीच घिरे रहना असीम शांति देता है, लगता है कि असल जीवन यही है, इसके बाहर शायद ही कुछ 'हाथ लगे'! क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान, भोपाल के प्रयोगात्मक बहुउद्देश्यीय स्कूल का प्रांगण! प्राथमिक कक्षाओं के बच्चों के साथ उनके परिवार, पसंद-नापसंद, आस-पास के बारे में बातचीत हो रही थी। बच्चों से कहा गया कि वे सभी अपने-अपने अनुभव लिखें। कक्षा पाँच में पढ़ने वाले जयंत कुमार ने अपनी बहन के बारे में अपना अनुभव कुछ इस तरह लिखा—

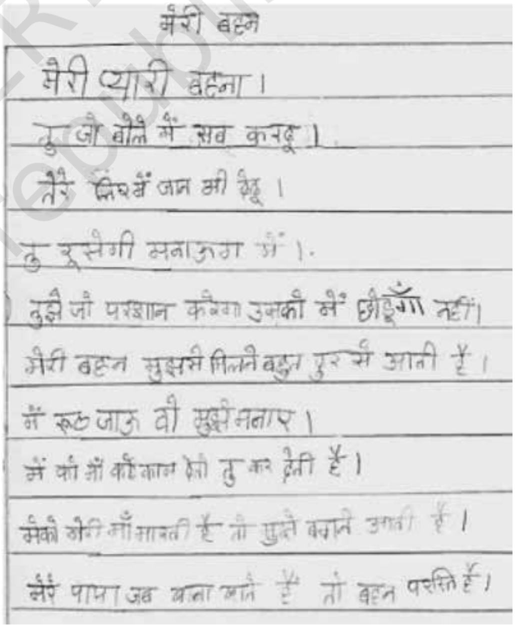

(मेरी प्यारी बहन

तू जो बोले मैं सब कर दूँ।
तेरे लिए मैं जान भी दे दूँ।

© NCERT not to be republished

तू रूसेगी मनाऊँगा मैं।
तुझे जो परेशान करेगा
उसको मैं छोड़ूँगा नहीं
मेरी बहन मुझसे मिलने बहुत दूर से आती है।
मैं रूठ जाऊँ वह मुझे मनाए।
मुझे माँ कोई काम देती है तू कर देती है।
मुझे मेरी माँ मारती है तो मुझे बचाने आती है।
मेरे पापा जब आते हैं तो बहन (खाना) परोसती है।)

जयंत ने अपनी बहन के बारे में जो लिखा उससे एक बात तो स्पष्ट है कि वह अपनी बहन से न केवल प्यार करता है बल्कि अपनी बहन के प्रति अगाध विश्वास भी है। वह अपनी बहन से इतना प्रेम करता है कि उसके लिए जान देने और सब कुछ करने की बात करता है। उसे अपनी बहन का रूठना भी दुख देता है इसलिए वह मनाएगा भी! जयंत को माँ कोई काम भी देती होंगी जिसे वह पूरा नहीं कर पाता होगा, तो बहन उसके हिस्से का काम कर देती होगी। इतना ही नहीं, माँ की मार से भी बहन बचाती है। पिता के भोजन का ध्यान भी बहन रखती होगी। 'मेरी बहन' कविता में वर्णित सभी घटनाएँ इस ओर संकेत करती हैं कि बहन बड़ी है और उसका बचपन कहीं खो गया होगा। बच्चे अकसर शरारतें तो करते ही हैं और उन्हें शरारतें करने का पूरा अधिकार है, जब तक किसी को कोई नुकसान न पहुँचे। घर में अनुशासन है इसलिए कोई अप्रिय बात होने पर नन्हे लेखक की पिटाई भी होती है जिसमें बहन उसे बचा लेती है। घर का एक और पक्ष जयंत के लेखन में नज़र आता है और वह यह कि पिता को भोजन परोसने का काम बहन के 'ज़िम्मे' है। इसका एक छिपा हुआ पहलू यह हो सकता है कि बहन जयंत से काफी बड़ी है और घर का काम सँभालती है। आज भी समाज 'लगभग ऐसा-सा ही' है। लड़कियों को पढ़ने के साथ-साथ घर के काम भी सँभालने पड़ते होंगे। यह बात जयंत को पसंद नहीं आती होगी तभी उसने इस बात का विशेष उल्लेख किया है, वरना पिछली पंक्तियों से कोई तालमेल नज़र नहीं आता। जयंत ने जो लिखा, उसमें उसकी बहन के साथ-साथ अपनी माँ और पिताजी के बारे में भी अप्रत्यक्ष रूप से 'काफ़ी कुछ' कह दिया! उसे अपने घर में अपनी बहन पर ही सबसे अधिक विश्वास है—यह तो समझ में आता है, लेकिन यह विश्वास क्यों? इसका कारण खोजना पड़ता है और जो कारण समझ में आता है वह यह है कि जयंत की बहन उसे मार से बचाती है, उसका काम कर देती है। इसका अर्थ यह भी है कि बच्चों की दुनिया में मार और काम—दोनों ही उतने उत्साहपरक या वांछनीय नहीं हैं जितना खेल होता है। हाँ, यह काम की प्रकृति पर भी निर्भर करता है कि वह बच्चों के मन का काम है या नहीं। अपनी उम्र के मुताबिक बच्चों को मिट्टी से खेलना और चुनौतियों का सामना करने वाले काम अपेक्षाकृत अधिक पसंद आते हैं। तो फिर माँ जयंत से क्या काम करवाती होंगी? संभवतः वह काम जयंत के मन, उसकी पसंद का काम नहीं होगा! तो जो व्यक्ति उन्हें इन नापसंद कामों से बचा लें तो वही व्यक्ति उनका सबसे प्यारा व्यक्ति बन जाता है। जयंत जैसे अनेक बच्चे नापसंद काम को करने के लिए विवश भी होंगे! सबके पास जयंत की बहन जैसी बहन भी कहाँ होगी! बच्चों के जीवन के कई पहलू इस लेखन

में स्पष्टतः देखे जा सकते हैं। घर और परिवार का ‘स्थायी भाव’ भी समझ में आने लगता है, मस्तिष्क खुलने लगता है और साथ ही सोच का दायरा भी। जयंत की यह कविता अनेक प्रकार के अनुत्तरित सवाल भी छोड़ती है जिनके जवाब हमें ही खोजने होंगे। यह तभी संभव हो सकेगा जब हम बच्चों के लेखन को बहुत ध्यान से पढ़ेंगे।

जूता-चप्पल

शोभेन्द्र शील तोमर कक्षा तीन में पढ़ता है। वह भी जयंत के साथ क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान, भोपाल के प्रयोगात्मक बहुउद्देश्यीय स्कूल-प्रांगण में हुई कार्यशाला में मौजूद था। शोभेन्द्र ने भी अपने परिवार, दोस्तों, पसंद-नापसंद के बारे में अपने अनुभव सुनाए और फिर उन्हें कुछ इस तरह से लेखनीबद्ध किया —

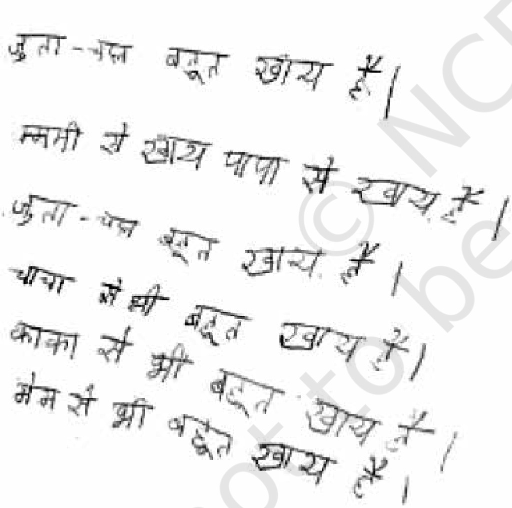

(जूता-चप्पल बहुत खाए हैं।
मम्मी से खाया, पापा से खाए हैं।
चाचा से भी बहुत खाए हैं।
काका से भी बहुत खाए हैं।
मैम से भी बहुत खाए हैं।)

यकीनन शोभेन्द्र को अपने घर में बहुत डाँट-फटकार पड़ती होगी। संभवतः घर के बड़े लोगों ने इस बच्चे को पीटा हो और पिटाई में उस ‘चीज़’ का इस्तेमाल किया हो जिसका उल्लेख उसने अपने लेखन में किया है! बच्चे ने उन लोगों के नामों का उल्लेख किया है जो उसके करीबी हैं और जिनसे उसका निरंतर संपर्क रहता है। बच्चा स्कूल जाता है, यह तय है और अपनी शिक्षिका से डाँट भी अकसर खाता होगा। इस बच्चे के लेखन से उसकी पारिवारिक संरचना का भी अंदाज़ा मिलता है। यह संयुक्त परिवार है जिसमें चाचा और काका (पिता के बड़े भाई) एक साथ रहते हैं और परिवार में ‘पुरुषों’ का वर्चस्व है। हालाँकि माँ भी पिटाई करती हैं, जैसा कि बच्चे ने लिखा है। एक आम व्यक्ति यह कह सकता है कि ‘अब बच्चा माता-पिता की सुनेगा नहीं तो मार ही खाएगा, इसमें बुरा क्या है?’ लेकिन यह इतना सरल नहीं है। हमारा कोई भी व्यवहार बच्चे के मन-मस्तिष्क पर अपना प्रभाव छोड़ता ही है। हमें लगता है कि बच्चा ही तो है, वह क्या समझे! लेकिन बच्चे भी उतने ही संवेदनशील होते हैं जितने बड़े! बच्चों के अवांछनीय व्यवहार पर ध्यान दिया जाना चाहिए और उसे ‘सही’ भी करना चाहिए लेकिन हम तरीकों के इस्तेमाल में मात खा जाते हैं। हमारी तमाम संवेदनशीलता केवल हम तक ही सिमटकर रह जाती है। ‘सरेआम’ बच्चों की पिटाई तो और भी दुखद और दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति है। माता-पिता ने जो कहा और वह बच्चे ने तुरंत पूरा न किया हो तो ‘तड़ाक!’ से एक जड़ दिया और उस पर यह धमकी भी —‘खबरदार,

© NCERT not to be republished

जो रोए तो! एक तो गलती करते हो और ऊपर से रोते हो? चुप! एकदम चुप!' यह दृश्य किसी भी जगह देखा जा सकता है—घर में, बाज़ार में, किसी रिश्तेदार के घर में, सड़क पर, रेलगाड़ी में, बस में, मेले में! वे सभी स्थितियाँ जहाँ-जहाँ बच्चे रहते हैं। रोना एक तरह से थैरेपी का काम करते हैं। रोने से दिल हल्का हो जाता है और भीतर का गुबार बाहर आ जाता है। रोना स्वास्थ्य के लिए हितकर है। बच्चों का रोना तो और भी स्वाभाविक है। माता-पिता और शिक्षक होना 'तपस्या' है और इस 'तपस्या' में एक ही चीज़ सबसे ज़्यादा काम करती है और वह है—धैर्य! धैर्यपूर्वक किया गया अवलोकन और धैर्यपूर्वक लिए गए सही निर्णय एक बेहतर माता-पिता तथा शिक्षक बनने में मदद करते हैं।

बच्चों का लेखन उसके जीवन-अनुभवों का तो वर्णन करता ही है, अप्रत्यक्ष रूप से उन अनुभवों की गहनता का भी वर्णन करता है। इस बच्चे के लेखन में एक विशिष्ट अंश है—'जूता-चप्पल बहुत खाया है।' और इस वाक्य का प्रयोग दो बार हुआ है। इस अंश में पुनः एक और विशिष्ट भाषा-प्रयोग है और वह है—'जूता-चप्पल/बहुत खाया'! सामान्यतः सार्थक शब्द-युग्म का प्रयोग भावों को बल देता है, जैसे 'दिन-रात', 'अंदर-बाहर' आदि। 'जूता-चप्पल' में भी उसी भाव-प्रबलता के दर्शन होते हैं।

बच्चे, शिक्षा और संदर्भ

बच्चों की लिखित अभिव्यक्ति में सृजनात्मकता की झलक भी मिलती है। वे जो कुछ कहना चाहते हैं, उसके लिए शब्दों की खोज और कहने का अंदाज़ सृजन ही तो है। बच्चों की अगर अभिव्यक्ति में 'तत्व' को खोज पाना सभी शिक्षकों के लिए ज़रूरी तो है लेकिन वह सबके वश की बात हो— यह भी ज़रूरी नहीं है। 'आम के बाद गुठली आती है।' दुनिया का सबसे खूबसूरत वाक्य है! शिक्षिका कुछ और पूछना चाहती थी और बच्चा कुछ और समझ व्यक्त कर रहा था, फिर भी इस वाक्य में गजब की सृजनात्मकता है। सृजन हम सबके जीवन में बहुतायत में शामिल है। आप जो काम करते हैं, उसे अलग ढंग से करते हैं, आपके पहनने-ओढ़ने के सलीके में भी सृजनात्मकता होती है। "अगर हम अपने आस-पास नज़र डालें तो पाएँगे कि हर वस्तु में, जो जीवित है, कुछ न कुछ हो रहा है। सामने का पीपल का पेड़ जो सारे पत्ते झाड़ चुका है, नए लाल पत्तों से भर रहा है। क्यारी में लगा भिंडी का पौधा अपने फूल गिरा अब बहुत छोटी-सी भिंडी बाहर ला रहा है। अमरूद के रूखे पेड़ का हरा फल धीरे-धीरे पक रहा है। आम की मंजरियाँ पहले छोटे टिकोले में, फिर पूरे हरे फल में, फिर हरा फल पीले पके फल में और फिर उस फल की गुठली से कत्थई पत्तों वाला नन्हा पौधा—यह क्रम चलता रहता है। यही तो प्रकृति की सृजनात्मकता है। प्रकृति सबसे बड़ी सर्जक है। मनुष्य ने प्रकृति से यह गुण सीखा।" (*सृजन-1*, 2008, पृष्ठ 4) सृजनात्मकता हमारे आस-पास ठीक वैसे ही हमारे जीवन का हिस्सा है जैसे बस या रेलगाड़ी में सामान बेचने वाले अलग स्वर में, अलग अंदाज़ में अपने सामान की खूबियाँ बताते हैं और ग्राहकों को आकर्षित करते हैं। सृजनात्मकता भी शिक्षा की तरह स्कूल की चाहरदीवारी तक सीमित नहीं है। वह तो मुक्त आकाश में विचरण करती है और तमाम तरह के नियमों का बेलौस उल्लंघन करती है।

© NCERT not to be republished

बच्चों को भी यही आज़ादी और मुक्ताकाश चाहिए! क्या हम दे पा रहे हैं यह सब? क्या स्कूल यह दे पा रहा है?

बच्चों की शिक्षा के संदर्भ में उनकी प्रकृति, उनके स्वभाव को समझना ज़रूरी होता है। बच्चों में सभी तरह की कुशलताएँ भले ही न हों लेकिन कोई-न-कोई कुशलता या हुनर होता है जिसे संवर्धित किया जाना ज़रूरी है। बच्चे स्वभाव से ही खोजी प्रवृत्ति के होते हैं और उन्हें कुछ-न-कुछ खोजना आनंद देता है। यह 'खोज' भी उनकी दुनिया का एक अहम हिस्सा है। *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005*, पृष्ठ 14 और 16 भी बच्चों के बारे में यही कहती है कि "वे खोजबीन करते हैं, प्रतिक्रिया करते हैं, चीज़ों के साथ कार्य करते हैं, चीज़ें बनाते हैं और अर्थ गढ़ते हैं। ... बच्चा संसार का ज्ञान ग्रहण करता है और नए ज्ञान का सृजन भी करता है। ... बच्चे उसी वातावरण में सीख सकते हैं जहाँ उन्हें लगे कि उन्हें महत्वपूर्ण माना जा रहा है। हमारे स्कूल आज भी ऐसा महसूस नहीं करवा पाते। सीखने का आनंद व संतोष के साथ रिश्ता होने की बजाय भय, अनुशासन व तनाव से संबंध हो तो यह सीखने के लिए अहितकारी होता है। आज यह आवश्यक है कि हमारे सभी बच्चे यह महसूस करें कि वे सभी, उनका घर, उनका समुदाय, उनकी भाषा और संस्कृति महत्वपूर्ण हैं। इन्हें अनुभव के ऐसे संसाधनों के रूप में देखा जाए जिन्हें विद्यालय में जाँचा और विश्लेषित किया जाना है, उनकी विविध क्षमताओं को मान्यता मिले, यह माना जाए कि सभी बच्चों में सीखने की क्षमता है और सभी के ज्ञान एवं कौशलों तक पहुँच हो और वयस्क समाज उन्हें सबसे अच्छा करने के योग्य माने।"

बच्चों द्वारा साझा किए गए अनुभव किसी भी शिक्षा नीति के लिए धरोहर ही हैं। बच्चे हमें बहुत कुछ

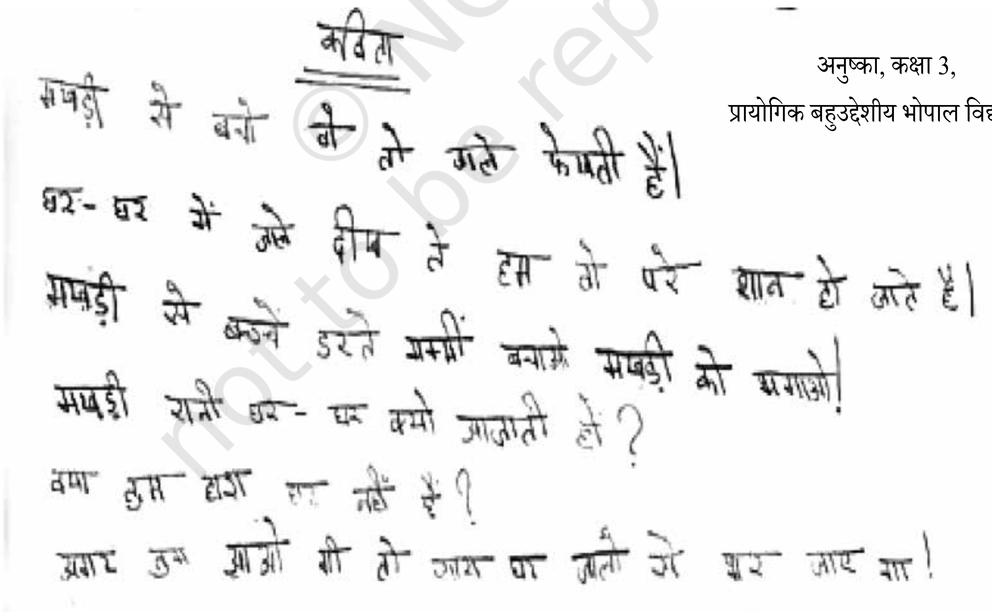

अनुष्का, कक्षा 3,
प्रायोगिक बहुउद्देशीय भोपाल विद्यालय,

© NCERT not to be republished

बताते हैं, सिखाते हैं और यह निर्धारित करने में मदद करते हैं कि उनके साथ किस तरह से पेश आया जाए। बच्चों के मनोविज्ञान की किताब पढ़ना अलग बात है और बच्चों के साथ रहते हुए, उनके साथ काम करते हुए बाल-मन को पढ़ना अलग बात! एक दृष्टि से देखा जाए तो किताबों में वही सब लिखा होता है जो 'ज़िंदगी की किताब' में घटता है। तो फिर क्यों न सीधे-सीधे यही किताब पढ़ी जाए! बच्चों के बीच जाकर हमें यह अहसास होता है कि अभी बहुत कुछ समझना बाकी है। बच्चों के बारे में अभी तक कोई भी किताब जो कहती है, वह अधूरी है! बच्चों के बारे में अभी तक जो कहा गया है वह भी अधूरा है—'पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते। पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते॥' के लिए प्रतीक्षारत हैं हम सभी!

संदर्भ

कुमार, कृष्ण. 2013. *राज समाज और शिक्षा.* राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्. 2006. *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005*. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, नयी दिल्ली

———. *सृजन-1* (कक्षा 11 के लिए सृजनात्मक लेखन और अनुवाद की पाठ्यपुस्तक) 2008. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, नयी दिल्ली

© NCERT not to be republished